Knowledgeable Research (An International Peer-Reviewed Multidisciplinary Journal) **ISSN 2583-6633**
Available Online: http://knowledgeableresearch.com Vol.04, No.08, August,2025

वेदों में निहित काव्यात्मक तत्त्व

* डॉ०ऋचा मुक्ता, एसोसिएट प्रोफेसर
ए.पी. सेन मेमोरियल गर्ल्स पी.जी .कॉलेज,चारबाग़ लखनऊ

****

शोधसार :*वैदिक साहित्य भारतीय संस्कृति की प्राचीनतम निधि है, जिसमें ज्ञान, विज्ञान, धर्म, दर्शन और काव्य—सभी का अद्भुत समन्वय मिलता है। यद्यपि वैदिक ऋचाएँ मूलतः यज्ञीय तथा धार्मिक उद्देश्यों से रची गई थीं, तथापि उनमें काव्य का सौन्दर्य, भावप्रवणता और कलात्मकता भी विद्यमान है। यही कारण है कि वैदिक साहित्य को काव्य परम्परा का प्रथम चरण माना जाता है।*

ऋग्वेद में वर्णित ऋचाएँ छन्द, अलंकार और रस के उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। देवताओं की स्तुतियों में उपमान, रूपक, अनुप्रास आदि अलंकार स्वाभाविक रूप से प्रकट होते हैं। जैसे अग्नि देव का चित्रण—

"अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।" (ऋग्वेद 1.1.1)

यहाँ अग्नि को यज्ञ का पुरोहित एवं देव कहा गया है, जो रूपक और स्तुति दोनों के उदाहरण हैंइन्द्र की महिमा का वर्णन करते हुए कहा गया—

"स इन्द्रः पुर एता नि वज्री हन्ति वृत्राणि।" (ऋग्वेद 2.11.5)

इसमें इन्द्र के पराक्रम का वीररसपूर्ण चित्रण है।सामवेद तो स्वयं ही संगीत और काव्य का ग्रंथ है। यजुर्वेद में अनुष्ठानिक भाषा होते हुए भी काव्यात्मक प्रवाह मिलता है। अथर्ववेद में लोकजीवन से जुड़े गीत, मन्त्र और प्रार्थनाएँ हैं, जिनमें सरलता, भावुकता और लोकसंगीत की झलक मिलती है। प्रकृति चित्रण भी अत्यन्त काव्यमय है। नदियों की स्तुति में कहा गया—

"इमा मे गङ्गा यमुना सरस्वती शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या।" (ऋग्वेद 10.75.5)

जहाँ गंगा, यमुना, सरस्वती आदि नदियों को काव्यात्मक ढंग से सम्बोधित किया गया है।इस प्रकार वैदिक साहित्य का काव्य तत्त्व केवल अलंकारों या छन्दों तक सीमित नहीं है, बल्कि उसमें प्रकृति चित्रण, भावाभिव्यक्ति और मानवीय संवेदनाएँ भी गहराई से प्रकट हुई हैं। अतः यह कहना उचित है कि वैदिक साहित्य भारतीय काव्य परम्परा की नींव है, जिसमें आध्यात्मिकता और काव्य सौन्दर्य का अनूठा संगम मिलता है।

बीज शब्द : वैदिक साहित्य,ऋग्वेद,अलंकार और छंद ,काव्य तत्व

****

वेद भारतीय ज्ञान का मूल आधार है। यह सर्वमान्य है कि वेद सबसे प्राचीन हैं। विदेशी विद्वान भी कहते हैं कि ऋग्वेद विश्व के सभी ग्रंथों में सबसे प्राचीन है। वैदिक मंत्रों के ऋषि, तीनों कालों के ज्ञाता थे, सांसारिक और पारलौकिक ज्ञान से संपन्न थे, **यथा पिण्डे तथैव ब्रह्माण्डे** इस रहस्य के भेदक और रहस्योद्घाटनकर्ता तथा सभी शास्त्रों के प्रवर्तक थे। विचारणीय बात यह है कि वेदों में काव्यात्मक तत्व कहाँ हैं? इस जिज्ञासा का समाधान मैंने संक्षेप में अपनी बुद्धि के अनुसार इस लेख में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

कवि शब्द का प्रयोग एक शाश्वत प्रवाह में प्रवाहित होता प्रतीत होता है। कवि शब्द वेदों में रचनाकार के दूसरे नाम से प्रयुक्त हुआ है।

यथा:- "कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भू"[1]।

कवि, बुद्धिमान, स्वामी, स्वयंभू और कविता, जो सृजन का दूसरा नाम है, वेदों में इसी तरह देखी जाती है:-

"पश्य देवस्य काव्यं न ममार न जीर्यति"[2]।

कहा गया है कि देखो,भगवान की कविता न तो मरती है और न ही क्षय होती है।

विद्या के अठारह स्थानों में जिसकी प्रधानता आद्य-वैदिक अलंकार है, उसका प्रथम स्कंध संहिता के रूप में है,और संहिताओं में **"ऋक् संहिता"** प्रथम है। वह काव्यात्मक भी हैं **"यत्रार्थवशेन पादव्यवस्था सा ऋक्"**

यह भी कहा जाता है "जहाँ पाद व्यवस्था अर्थ के अनुसार है, वह ऋग्वेद है," पाद व्यवस्था से पहले छंदबद्ध ऋचाओं का समूह ऋग्वेद का हिस्सा बन जाता है। विद्या के स्थानों में काव्य की प्रधानता के विषय में लेशमात्र भी संदेह नहीं किया जा

[1] शुक्लयजुर्वेदः 40/8

[2] अथर्ववेदः 10/8/32

सकता है। इसीलिए पुनरावृत्ति के भय से किसी ने ज्ञान के स्थानों की गिनती में काव्य या उस ग्रंथ को नहीं गिना है।

पहली कविता संहिताबद्ध है। पूर्व रहस्यवाद उनके द्वारा दिये गये कथनों का अर्थ निर्धारित करने में लगा हुआ है। परिणामस्वरूप, हमारे शिक्षक सिखाते हैं कि पूर्व रहस्यवाद पहला काव्य अनुशासन है। वस्तुतः काव्य की प्राणधारा जो सौन्दर्यात्मक तत्त्व है, वह उन-उन संहिताओं में भी चमत्कारी है, काव्यात्मकता को बनाये रखते है।

कुछ धर्मग्रंथ सीधे वेदों से संबंधित हैं तथा कुछ पारंपरिक रूप से। वेदों के साथ संबंध ही उन्हें धर्मग्रंथ घोषित करता है। आलोचक किसी भी ग्रंथ की उपयोगिता तब तक स्वीकार नहीं करते जब तक उसका संबंध वेदों से न हो। इसलिए, उस शास्त्र के विशेषज्ञ विद्वान यह दावा करते हैं कि सभी शास्त्र वेदों की प्राप्ति हैं। राजशेखर ने शास्त्रों के आधार पर साहित्य शास्त्र की भी स्थापना की। उस उद्देश्य के लिए, उन्होंने वैदिक और धर्मनिरपेक्ष दृष्टिकोण से साहित्य विज्ञान के महत्व को प्रदर्शित किया और इसका शास्त्रोक्त स्वरूप सिद्ध हो चुका है। उन्होंने कहा कि साहित्य वेदों का सातवां अङ्ग है। जिस प्रकार शिक्षा, कल्प, निरुक्त, छन्द, व्याकरण और ज्योतिष इन छः विद्याओं के ज्ञान के अभाव में वेदों का यथार्थ अर्थ प्रकट नहीं होता, उसी प्रकार काव्यशास्त्र के ज्ञान के अभाव में वेदों का यथार्थ अर्थ प्रकट नहीं होता। अतः वेदों के अर्थ को समझने के लिए अलङ्कार शास्त्र सर्वाधिक उपयोगी है। क्योंकि वेदों में रूपक और उपमा आदि अनेक अलङ्कार हैं। जैसा कि राजशेखर ने कहा-

"शिक्षा, कल्पो, व्याकरणं, निरुक्तं, छन्दोविचितिः,
ज्योतिषं च षडङ्गानि इत्याचार्याः।
उपकारकत्वादलङ्कारः सप्तममङ्गम् इति
यायावरीयः।
ऋते च तत्स्वरूपपरिज्ञानाद्वेदार्थानवगतेः"[3]

आचार्यों का कहना है कि शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छंद और ज्योतिष ये छह अङ्ग हैं। यायावरी कहते हैं कि अलङ्कार सातवां अङ्ग है क्योंकि यह उपयोगी है। और वेदों के स्वरूप को जानकर उनके अर्थ को समझने के अतिरिक्त काव्यात्मक रूप पर भी ध्यान केन्द्रित करना आवश्यक है :-

तद्यथा:-

"द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्यनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति"[4]

॥

प्रस्तुत मंत्र में दर्शन का तत्व निहित है और इसमें कोई संदेह नहीं है, लेकिन साहित्य की दृष्टि से भी यह अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। वैदिक दर्शन के अनुसार ईश्वर, सत्ता और प्रकृति मूल तत्त्व हैं। ईश्वर प्रकृति (शक्ति) द्वारा सृष्टि करता है, और जिसमें जीव अपने कर्मों का फल (सुख और दुःख सहित) भोगता है। वस्तुतः काव्यात्मक शैली के इस मंत्र में दर्शन का निर्णायक तत्त्व छिपा हुआ है इसीलिए यह मंत्र काव्य के उत्कृष्ट उदाहरण के रूप में प्रसिद्ध है। इस मन्त्र में ईश्वर के स्वरूप, प्राणियों के नाम का उल्लेख नहीं है, बल्कि रूप, काल और अलङ्कार की योजना का उल्लेख है। सुपर्ण दो हैं, ईश्वर और जीव।

"समानं वृक्षं परिषस्वजाते" वे एक ही पेड़ से उत्पन्न हुए हैं," जिसका अर्थ है कि वे दोनों एक ही प्रकृति में रहते हैं। उनमें से एक अंजीर के पेड़ का स्वाद चखता है, जिसका अर्थ है कि प्राणी अपने कार्यों के कारण होने वाले दुःख और सुख का फल खाता है।

"अन्यः अनशनन अभिचकशिति" का अर्थ है कि भगवान (परमात्मा) फल नहीं खाते हैं और हर जगह अपनी सुंदरता प्रकट करते हैं।

काव्य की यह अतुलनीय शैली, जिसमें भाषा की अंतर्निहित प्रभावशीलता दिखाई देती है, अन्यत्र दुर्लभ है, यहाँ तक कि संपूर्ण वांङ्मय में भी।

पात्र के रूप और काल का सौंदर्य, 'सुपर्णा, सयुजा, दो सखियाँ एक ही **'परिषस्वजते'** में छंद योजना सर्वथा रोचक प्रतीत होती है।

"अनश्नन्न्याः अभिचकशिति"चूँकि यहाँ, अपने स्वयं के तेज के फल का आनंद लिए बिना प्रसार द्वारा कारण रहित कार्य की उत्पत्ति के रूप में कल्पना की रचना है।

[3] काव्यमीमांसा 2.2-3

[4] ऋग्वेदः 1/164/20

यह एक विशेष चमत्कार उत्पन्न करता है क्योंकि फलों का आनंद ही सुंदरता का स्रोत है।

कारण संसार में है, "शरीर भय बतलाता है" की नीति से इसी वाक्य का रुकावट से, अर्थात् फल के आनंद के अभाव में भी सौंदर्य के रहस्योद्घाटन से, कारण में फलाभाव के रूप में कथन का विशेष चमत्कार है इस प्रकार यहाँ मंत्र में रूपक, छंद, भाव और विशेष भाव अलङ्कार हैं। उसी प्रकार यह भी है "सायुज" और "सखाय" जीव और परमात्मा के विशेषण हैं। अंतिम अर्थ इसकी अर्थहीनता, इसकी निरंतरता और सत्य के प्रतीकवाद द्वारा दर्शाया गया है। इसलिए कदमों की आहट का चमत्कार यहां हृदय को अभिव्यक्त होता है।

इस प्रकार के विश्लेषण से इस मन्त्र का अर्थ साहित्यशास्त्र की दृष्टि से यथार्थ रूप से परिलक्षित प्रतीत होता है।

वेदों में इस प्रकार के अनेक सूक्त हैं। उदाहरण के लिए,

यथाऽनुप्रास:- "हिरण्यकर्ण मणिग्रीवमर्ण:"[5]

"चत्वारो मा मशर्शारस्य शिश्व:[6]।

ऋग्वेद में अलङ्कार का एक उदाहरण दिया गया है:-

चत्वारि शृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य।

त्रिधा वद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्यानाविवेश[7]।।

इसके चार सींग, तीन पैर, दो सिर और सात हाथ हैं। तीन टुकड़ों में बँधा बैल चिल्लाया और महान देवता मनुष्यों में प्रवेश कर गये।

इस मंत्र के द्रष्टा वामदेव गौतम हैं और इसके देवता अग्नि, सूर्य, आप, वृषभ और घृत हैं। इसी कारण पाँच देवताओं के पक्ष में भी अलग-अलग पाँच अर्थ होते हैं। अत: यह अलङ्कार का एक अच्छा उदाहरण होना चाहिए।

उपआभूषण ही सर्वथा शाश्वत आभूषण है। ऋग्वेद में रूपक का स्थान इस प्रकार है:-

गवामिव स्स्रुतय: संचरणी, वाता इवोरव:, रथा इव प्रययु:[8]।

ऋग्वेद में कभी-कभी उपमा शब्दों में 'व' शब्द का प्रयोग भी ध्यान देने योग्य है।

यथा:- शूरो वा पृत्सु काषुचित्[9]

शर्धो वा यो मरुताम्[10]।

श्लेषलङ्कार का चमत्कार निम्नलिखित मंत्र में देखा गया है:-

यथा:-

सुपर्णा अमृतस्य भागमनिमेषं विदथाभिस्वरन्ति।

इनो विश्वस्य भुवनस्य गोपा: स मा धीरा: पाकमत्रा विवेश[11]।।

हे संसार के चरवाहों, धैर्य मत करो, वह खाना पकाने के बर्तन में प्रवेश कर गया। यहाँ मंत्र में दो अर्थ ध्यान में देने योग्य हैं।

१-आध्यात्मिक अर्थ और प्रकृति तथा अन्य विषयों का वर्णन।

२-आधिभौतिक अर्थ पक्षियों, पेड़ों आदि के बारे में है।

और फिर भी दोनों अर्थों की काव्यात्मक प्रकृति अंतर्निहित है।

काव्य के सार तथा सौंदर्य पर चर्चा करने के उद्देश्य से शुक्ल यजुर्वेद के कुछ उदाहरण यहां प्रस्तुत किये गये हैं।

- **उपमा अलङ्कार :-**

स न: पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव। सचस्वा न: स्वस्तये[12]।

पुत्रमिव पितरावश्विनौ इन्द्रावयु: काव्यैर्दसनाभि:[13]।

मातेव पुत्रं पृथिवि पुरीश्यमग्नि स्वैयौनावमारुषा[14]।

कन्या इव वहतुमेतवा उ अंज्यञ्जाना अभिचाकशीमि[15]।

- **अनुप्रास अलङ्कार : -**

द्यौ: शान्तिरन्तरिक्षं शान्ति:[16]।

यहां रकार का अनुसरण और वकार का अनुसरण तथा शांति शब्द का बार-बार दोहराया जाना छंद का लालित्य है।

[5] ऋग्वेद: 1/122/14
[6] ऋग्वेद: 1/122/15
[7] ऋग्वेद:-4/58/3
[8] ऋग्वेद: 9/41/3
[9] ऋग्वेद: 6/3/8
[10] ऋग्वेद: 2/12/2
[11] ऋग्वेद 1.164.21
[12] शुक्लयजुर्वेद: 3.24
[13] शुक्लयजुर्वेद: 10.34
[14] शुक्लयजुर्वेद: 12.61
[15] शुक्लयजुर्वेद: 17.97
[16] शुक्लयजुर्वेद: 30.17

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्[17]।।

यह पूरा संसार तथा संसार की प्रत्येक वस्तु ईश्वर का मुख है। उसने तुम्हें जो दिया है उसका आनंद लो और किसी के धन का लालच मत करो।

तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा इत्यादि मंत्र की पंक्तियों में अनुप्रास अलङ्कार है।

वेदों में न केवल अलङ्कार की गङ्गा प्रतिपल अविरल बहती है, बल्कि अन्य काव्य तत्वों का भी वर्णन है।

ध्वनि तत्वों की दृष्टि से कुछ उदाहरणों पर विचार करें।

प्रसारित वाक्यांश की दृष्टि से- **"विश्व इत् स्पृधो अभ्यासस्नवव"**[18] यहाँ स्पृद्धा शब्द का प्रयोग हुआ है जिसका अर्थ केवल प्रतिस्पर्धा है। यहां तात्पर्य यह है कि प्रतिस्पर्धी इच्छा जनित संघर्ष में है। इसी प्रकार ध्वनि के अनेक उदाहरण वेदों में मिलते हैं।

भावनाओं और भावनाओं के संचरण के संयोजन की शक्ति से काव्य शास्त्र में पारङ्गत बुद्धिजीवियों द्वारा ऋग्वेद में विभिन्न संदर्भों में स्वाद के सार का विनियोजन किया गया है। जैसे पुरुरवा और उर्वशी के संवाद में, वैसे ही सूर्य और चंद्रमा के विवाह में। कामोन्माद में इन दो सौंदर्य संबंधी देरी का वर्णन चमकता है। उषा सूक्त में सौन्दर्य का वर्णन है और यह कामोन्माद के अलङ्करण के लिए सर्वथा उपयुक्त है। भोर अपने अङ्गों से सुसज्जित नर्तकी की भाँति अपने अहङ्कारी यौवन का आभास उसी प्रकार प्रकट करती है, जिस प्रकार गायें दूध दोहते समय अपने उभरे हुए स्तन प्रकट करती हैं।

अधिपेशांसि वपते नृतूरिवापोर्णते वक्ष उत्रेव वर्जहम्।
ज्योतिर्विश्वस्मै भुवनाय कृण्वती गावो न व्रजं व्युपा आवर्तमः[19]।।

इस मंत्र में उषा नायिका वासना की भावना का स्रोत है। उसके वक्षस्थल का उभरना और रोशनी का फैलाव उद्दीपन्न की मनोदशा है। स्वाद गुणों पर निर्भर करता है यद्यपि सद्गुणों की अवधारणा के बाद काव्य अनुशासनों में विकसित हुई। हालाँकि, गुणों का व्यावहारिक स्वरूप वैदिक मंत्रों में भी प्राप्त होता है।

यथा:-

प्र शुन्ध्युवं वरुणाय प्रेष्टं मतिं मीदहुशे भारस्व।
य ईमर्वाञ्चं करते यजत्रं सहस्रामद्यं वृषणं बृहन्तम्[20] ।।

यहाँ मन्त्र में श् ध् ण् र् स् य् अक्षरों के योग से यह पद ओज गुण हो जाता है।

जिस छंद में प्रथम, तृतीय, पञ्चम वर्ण तथा अन्य कोमल वर्णों की प्रधानता हो उसमें मधुरता का गुण होता है।

यथा ऋग्वेद में:-

मधुवाता ऋतायते मधुक्षन्ति सिन्धवः,माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः।
मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमानस्तु सूर्यः,माध्वीर्गावो भवन्तु नःगाय[21]

मधुमय हवा चलती है, समुद्र मधु को निगल जाते हैं, और जड़ी-बूटियाँ हमारे लिए मधु हो सकती हैं। मधु हमारा पौधा हो, मधु सूर्य हो, और मधु गायें हमारी गायें हों।

यथा:-

वस्त्रेव भद्रा सुकृता वसूयू रथं न धीरः स्वपा अक्षम्[22]।

अर्थात् वस्त्र की भाँति मैंने गुणरूपी स्तुति का विस्तार किया है और मैंने स्तुति की मालाएँ भी बनाई हैं, जैसे बड़ी कुशलता से काम करने वाला सारथी बड़ी सुंदरता और कुशलता से रथ बनाता है। या शायद मेरा मन आग के लिए शांतिदूत बन जाएगा। इस प्रकार वक्र के माध्यम से अर्थ समझ में आता है। रूपक,उपमा,अतिशयोक्ति भेद आदि अलङ्कारों की महान विशिष्टता का वहां हृदयों द्वारा आनंद लिया जाता है।

यथा:-

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्व जाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वति अनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति[23]।।

[17] शुक्लयजुर्वेदः 40.1
[18] ऋग्वेदः 1/179/3
[19] ऋग्वेदः 1/92/4
[20] ऋग्वेदः 7/88/1
[21] ऋग्वेदः 1/90/6-8
[22] ऋग्वेदः 8/69/12
[23] ऋग्वेदः 1/164/20

"दो सुपर्णा, एक साथ मिलकर, अपने मित्र के रूप में एक ही पेड़ से पैदा होती हैं।उनमें से एक अंजीर के पेड़ का स्वाद चखता है और दूसरा उसे नहीं खाता है। यह रहस्यमय है कि उपरोक्त मन्त्र में रूप एवं काल की चमत्कारी प्रकृति उत्पन्न होती है। अलङ्कार की धारणा के अतिरिक्त इस मंत्र का सटीक अर्थ निश्चित करना संभव नहीं है। वेदों में इस प्रकार के अनेक सूक्त हैं। उदाहरण के लिए, छंद:-

"हिरण्यकर्ण मणिग्रीवमर्ण[24] "

"चात्वारो मा मशरशरस्य शिश्व [25]

इस प्रकार अलङ्कार, ध्वनि, रस, गुण, वक्र वाणी आदि काव्य के तत्त्वों के बीज अनेक प्रकार से वेदों में मिलते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

- कविराजराजशेखरः- प्रो.रमेशकुमारपाण्डेयः - प्रथमसं.1998 नागप्रकाशकः जवाहरनगरम्, दिल्ली
- कालिदासग्रन्थावली- रेवाप्रसादद्विवेदी – प्रथम सं.- 1976 काशीहिन्दूविश्वविद्यालयः
- काव्यानुशासनम्- हेमचन्द्र- डॉ. प्रमिला त्रिपाठी, प्रथम सं- 1989 चौहान मुद्रणालयः दिल्ली।
- काव्यप्रकाशः - मम्मटः, आचार्यविश्वेश्वरः षष्ठ सं. 1960, ज्ञान- मण्डल वाराणसी
- काव्यशास्त्रम्-डॉ.भगीरथमिश्रः,चतुर्दश सं.-2001 विश्वविद्यालय- प्रकाशनम् वाराणसी।
- अथर्ववेदसंहिता- कन्हैयालाल जोशी- 2022
- ऋग्वेदसंहिता- डॉ. प्रसन्न चन्द्र गौतम
- वेद-पुराण ग्रन्थों द्वारा प्रभावित भातजीय समाज डॉ. नाराण कुमार।
- यजुर्वेद संहिता - श्रीराम शर्मा आचार्य।
- वैदिकसाहित्यं संस्कृतिश्च- बलदेव उपाध्यायः,पञ्चम सं.1980, शारदा संस्थानम्, वाराणसी।

पाद टिप्पणी:-

1- शुक्लयजुर्वेदः 40/8
2- अथर्ववेदः 10/8/32
3- काव्यमीमांसा 2.2-3
4- ऋग्वेदः 1/164/20
5- ऋग्वेदः 1/122/14
6- ऋग्वेदः 1/122/15
7- ऋग्वेदः-4/58/3
8- ऋग्वेदः 9/41/3
9- ऋग्वेदः 6/3/8
10 - ऋग्वेदः 2/12/2
11 - ऋग्वेद 1.164.21
12 - शुक्लयजुर्वेदः 3.24
13 - शुक्लयजुर्वेदः 10.34
14 - शुक्लयजुर्वेदः 12.61
15 - शुक्लयजुर्वेदः 17.97
16 - शुक्लयजुर्वेदः 30.17
17 - शुक्लयजुर्वेदः 40.1
18 - ऋग्वेदः 1/179/3
19 - ऋग्वेदः 1/92/4
20 - ऋग्वेदः 7/88/1
21 - ऋग्वेदः 1/90/6-8
22 - ऋग्वेदः 8/69/12
23 - ऋग्वेदः 1/164/20
24 - ऋग्वेदः 1/122/20
25 - ऋग्वेदः 1/122/14

*Corresponding Author: Dr. Richa Mukta
E-mail: richa.mukta@gmail.com
Received: 03 July,2025; Accepted: 23 August,2025. Available online: 28 August, 2025
Published by SAFE. (Society for Academic Facilitation and Extension)
This work is licensed under a Creative Commons Attribution-Noncommercial 4.0 International License

[24] ऋग्वेदः 1/122/20

[25] ऋग्वेदः 1/122/14